इकाई 2 प्राकृतिक शक्तियाँ

इकाई प्रारूप

2.0 उद्देश्य

2.1 प्रस्तावना

2.2 वास्तुशास्त्र की सामान्य अवधारणा

2.3 वास्तुशास्त्र में प्राकृतिक शक्तियों की अवधारणा

2.4 वास्तुशास्त्र के अनुसार विविध प्राकृतिक शक्तियां

2.4.1 चुम्बकीय शक्ति

2.4.2 गुरुत्वीय शक्ति

2.4.3 सौर शक्ति

2.5 सारांश

2.6 शब्दावली

2.7 उपयोगी पुस्तकें

2.8 बोध प्रश्न

2.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप:

- अधिगमकर्ता वास्तुशास्त्र की सामान्य अवधारणा को समझ सकेंगे।
- अधिगमकर्ता प्राकृतिक शक्तियों की वास्तुशास्त्रीय अवधारणा से परिचित हो सकेंगे।
- अधिगमकर्ता चुम्बकीय शक्ति की सामान्य अवधारणा को जान सकेंगे।
- अधिगमकर्ता गुरुत्वीय शक्ति की सामान्य अवधारणा को समझ सकेंगे।
- अधिगमकर्ता सौर शक्ति की सामान्य अवधारणा से परिचित हो सकेंगे।

2.1 प्रस्तावना

भारतीय ज्ञान मनीषा सर्वदा ज्ञान के अन्वेषण हेतु सभी को अभिप्रेरित करती आ रही है, हम सभी को विदित है कि ज्ञान नित्य है एवं अक्षुण्ण है, परंतु यह ज्ञान उस नवनीत के समान है जो मुख्य रूप से दूध में उपस्थित तो रहता है लेकिन जब तक उस दूध को जमाने के बाद दही में परिवर्तित कर उसको मथ नहीं देते तब तक वह नवनीत दृश्य नहीं हो पाता है ठीक इसी प्रकार वेद न केवल भारत के अपितु इस समस्त विश्व के ज्ञानकोश हैं। वेदों में निहित ज्ञान ही किसी न किसी रूप में आज भी समाज में तथा इस सृष्टि में दृष्टिगोचर हो रहा है। वास्तव में वेदों से ही अनेक अनेक शास्त्रों का उदय हुआ है, वास्तु शास्त्र भी इन्हीं में से एक महत्वपूर्ण शास्त्र है जो कि अथर्ववेद के उपवेद, स्थापत्य वेद के रूप में प्रसिद्धि को प्राप्त है। वास्तु शास्त्र में वर्णित वास्तोष्पति को हमारे वैदिक ऋषियों ने वास्तुपुरुष के रूप में घर की चेतना तथा आध्यात्मिक

स्वरूप का प्रतिरूप तथा कल्याणकारी मानकर उसकी उपासना पर जोर दिया है । यह वास्तुपुरुष ही एक प्रकार से प्राकृतिक शक्ति के रुप में हमारे घर में विद्यमान एक अत्यन्त महत्वपूर्ण शक्तितत्त्व है जिसके विना वास्तुशास्त्र नितान्त अपूर्ण है।

इस ब्रह्माण्ड में सबसे शक्तिशाली अगर कोई चीज है तो वह है प्रकृति। क्योंकि प्रकृति से ही सृष्टि से का विकास होता है तथा यही इसके ह्रास अथवा प्रलय की भी कारक है। प्रकृति की शक्ति उसके वातावरण में उपस्थित तीन प्रकार की शक्तियों में परिलक्षित होती है। ये शक्तियां प्रमुख रूप से गुरुत्वीय शक्ति, चुम्बकीय बल, एवं सौर ऊर्जा के रूप में विद्यमान हैं। वास्तुशास्त्र में इन तीनों प्रकार के बलों का उपयोग कर तन - मन एवं जीवन को सक्षम तथा संतुलित बनाने के लिए आवास के जिन नियमों, सिद्धान्तों वादों एवं प्रविधियों का प्रतिपादन किया गया है। वास्तव इन्हीं का समग्र रूप ही एक रूप से वास्तुशास्त्र कहलाता है। प्रकृति में अनुशासन हेतु विविध प्राकृति शक्तियां कार्य करती रहती हैं जिनके माध्यम से ही जगत की गतिशीलता बनीं रहती है। प्रकृति के सभी कार्य एक अनुशासन के अनुसार ही घटते रहते हैं। पंचमहाभूत तथा प्राकृतिक शक्तियों के परस्पर सामञ्जस्य से ही सृष्टि का विकास व प्रलय आदि होते रहते हैं।ब्रह्माण्ड में अनन्त शक्तियां हैं जिनमें से प्रमुखतया पृथ्वी पर सौर शक्ति - चुम्बकीय शक्ति तथा गुरुत्वीय शक्ति का साक्षात् प्रभाव पड़ता है।

2.2 वास्तुशास्त्र की सामान्य अवधारणा

सामान्यतया यह सभी जानते हैं कि वास्तु शब्द वस् धातु से निष्पन्न है। जो कि निवास अर्थ में प्रयुक्त होता है, अर्थात् निवास स्थान अथवा भवन निर्माण करने योग्य भूमि जहां पर निवास बनाया जाए उसे वास्तु कहते हैं, सरल रूप में कहे तो वास्तु की निर्माण विधि के सिद्धांतों तथा नियमों का प्रतिपादन करने वाला शास्त्र ही वास्तुशास्त्र है। यह शास्त्र भवन निर्माण हेतु भूखंड की गुणधर्मिता का परीक्षण कर वहां पर स्थित समस्त प्रकार की प्राकृतिक शक्तियों के प्रभाव का अध्ययन करता है। वास्तु शास्त्र का उद्देश्य, भवन निर्माण हेतु उपयुक्त भूखण्ड पर विविध प्राकृतिक तत्व, पंचमहाभूत व समस्त प्रकार की प्राकृतिक शक्तियों के सामंजस्य व संतुलन के विन्यास का प्रतिपादन कर व्यक्ति के जीवन में शान्ति, सुरक्षा व सुविधा के भाव का जागरण करना ही है। वास्तु शास्त्र देश दिशा वातावरण एवं गुरुत्वाकर्षण आदि प्राकृतिक प्रभावों का अध्ययन कर हमारे जीवन को सुविधा पूर्ण सुखमय एवं सुरक्षित बना कर समाज कल्याण की उदात्त भावना को प्रदर्शित करता है इसमें कोई संशय नहीं होना चाहिए सरल शब्दों में कहें तो वास्तु शास्त्र मानव जीवन को सर्वविध सुख, शांति, सुरक्षा एवं सुविधा प्रदान करता है। वास्तुशास्त्र में वर्णित वास्तुपुरुष व 45 देवता विविध प्रकार की प्राकृतिक शक्तियों के ही प्रतीक हैं जो कि वास्तु को एक चैतन्य स्वरूप प्रदान करते हैं। वास्तुशास्त्र के स्वतन्त्र ग्रन्थों में वास्तुशास्त्र का क्षेत्र अत्यन्त विस्तृत बताते हुए इसके आठ भाग बताये हैं, यथा -

> सामुद्रं गणितं चैव ज्योतिषं छन्द एव च।
> सिराज्ञानं तथा शिल्पं यन्त्रकर्मविधिस्तथा॥
> एतान्यङ्गानि जानीयाद् वास्तुशास्त्रस्य बुद्धिमान्॥[1]

अर्थात् वास्तुशास्त्र के आठ अंगों में सामुद्रिक शास्त्र, गणित शास्त्र, ज्योतिष शास्त्र, छन्द शास्त्र,

[1] समरांगणसूत्रधार, श्लोक संख्या 03 - 04, अध्याय 44

भूमिगत जल ज्ञान हेतु सिरा ज्ञान, शिल्पशास्त्र, यन्त्रकर्म तथा सभी प्रकार की विधियों का समावेश वास्तुशास्त्र में हो जाता है। इस प्रकार से स्पष्ट है कि प्राचीन काल से ही हमारा वास्तुशास्त्र समाज की दृष्टि में अत्यन्त आदरणीय रहा है तथा जीवन को सुव्यवस्थित व अनुशासनपूर्ण बनाने में वास्तुशास्त्र का सर्वाधिक योगदान रहा है।

स्थापत्य वेद ही उत्तरवर्ती काल में वास्तु शास्त्र के रूप में परिणित हुआ। वैदिक काल में भवनों का निर्माण ही वास्तु माना जाता था बाद में गृहों के विकास के साथ ही ग्राम, नगर एवं महानगरों का विकास भी होने लगा, इस प्रकार के सभी विकास वास्तु के अंतर्गत ही हुए जिसके चलते वास्तु के क्षेत्र में पर्याप्त विकास हुआ। भारतीय संस्कृति का मूल आधार देव तत्व है इस सन्दर्भ में यहां ध्यान रखना चाहिए कि देव तत्त्व ही प्राकृतिक शक्तियों का द्योतक है। हमारी संस्कृति में कोई भी कार्य बिना देव तत्व के प्रारंभ नहीं किया गया, कोई भी शास्त्र बिना देवत्व के पठनीय नहीं है, इसमें कोई भी कला बिना देवत्व के ग्राह्य नहीं हैं, जैसे नृत्य कला में नटराज शिव, संगीत में नादब्रह्म, आलेख में जगन्नाथ के पट चित्र तथा वास्तु में वास्तु पुरुष। हमारी संस्कृति सर्वत्र देव भावना से बधीं हुई है, अतः कह सकते हैं यही देवत्व भावना भारतीय स्थापत्य की विशेषता है। हमने कला और विज्ञान को अध्यात्म एवं दर्शन से अलग नहीं रखा। हमारी मान्यता के अनुसार कला का जन्म मनोरंजन से नहीं अपितु धर्म और दर्शन से हुआ है जो विज्ञान और कला अध्यात्म से शून्य तथा दर्शन से अनुप्राणित नहीं है वह कला एवं विज्ञान शुष्क काष्ठ की भांति जलाने योग्य एवं त्याज्य है। कला एवं विज्ञान आसुरी संपदा है उसे राक्षस नहीं बनने देना चाहिए इसलिए उसे भी देवत्व की भावना से सदैव अनुप्राणित रखना चाहिए, जिससे वह पृथ्वी, अंतरिक्ष, द्यावा, सूर्य चंद्र आदि के समान जन मंगल तथा जन रक्षण कर सके।

भारतीय वास्तु सूक्ष्म से सूक्ष्म है और महान से भी महान है। गृह चिन्तन में अणोरणीयान् है तथा ब्रह्माण्ड के चिंतन में महतोमहीयान् है। अतः इस संदर्भ में मात्र गृह तक ही चिंतन करना अभिशाप होगा। वास्तुशास्त्र भारतीय संस्कृति का वह ओजस्वी अंग है जिसमें पार्थिव और अपार्थिव दोनों का संगम होता है, इस संदर्भ का यह निष्कर्ष नहीं निकाला जाना चाहिए कि इस देश में भौतिक पक्ष को गौण माना गया, ऐसा नहीं है, हमने तो सदैव आध्यात्म एवं भौतिक को संतुलित रखा। भौतिक की उद्दाम गति का सदैव आध्यात्म से निरोध होना चाहिए तभी प्रक्रिया सनातन रह सकती है। अन्यथा भौतिकवादी भस्मासुर अपने जनक शिव को ही भक्षण करने का प्रयास करता है। इसलिए वास्तुशास्त्र में आवास निर्माण हेतु निर्धारित कये गये भूखण्ड पर समस्त प्रकार की प्राकृतिक शक्तियों का तथा साथ ही पांचमहाभूतों का सामञ्जस्य बिठाकर ही आवास बनाना चाहिए जिससे कि वहां पर रहने वासे समस्त लोगों के जीवन में सर्वविध सुख प्राप्त हो सके। यही वास्तुशास्त्र का प्रमुख ध्येय है।

2.3 वास्तुशास्त्र में प्राकृतिक शक्तियों की अवधारणा

वस्तुतःइस ब्रह्माण्ड की हर वस्तु का निर्माण आकाश-वायु-अग्नि-जल-पृथ्वी आदि पांच तत्वों से हुआ है जिन पर सर्वत्र तथा सर्वथा प्राकृतिक शक्तियों का प्रभाव रहता है और इन्हीं आकाशादि पंच महातत्त्व तथा प्राकृतिक शक्तियों का सामञ्जस्य किस प्रकार किया जाए यही वास्तुशास्त्र का मूल विषय है। वास्तव में प्रकृति के अनुरूप या प्रकृति के अनुसार किये गए कार्य का परिणाम ही हमारे लिए सर्वथा अनुकूल होता है। अन्य शब्दों में कहें तो यदि भवन या अन्य किसी भी प्रकार के निर्माण को यदि प्राकृतिक अनुकूलता मिले तो उसके फल भी

सर्वथा हमारे अनुकूल ही होंगे तथा इस प्रकार के प्रकृति अनुकूल किसी भी प्रकार के भवन निर्माण का उपयोग या उपभोग करने वाले व्यक्ति प्रकृति से सौहार्द अथवा सामञ्जस्य स्थापित होने के कारण किसी भी प्रकार के दोष से मुक्त होते हुए खुशहाल, सुविधा व सुरक्षा युक्त जीवन व्यतीत कर सकते हैं। वास्तुशास्त्र की दृष्टि से समझें तो आकाशादि पंचमहाभूत वास्तुपुरुष तथा आवास हेतु चयन की गई भूमि पर सूर्य आदि पैंतालीस देवों की आराधना से मनुष्य अपने को समर्पित करते हुए इन देव रूपी शक्तियों का कृपापात्र बन जाते हैं। इन सब देव शक्तियों की कृपा दृष्टि से उस जातक की भूमि तथा उस भूमी पर प्रकार किया गया भवनादि का निर्माण सकारात्मक ऊर्जाओं से भरपूर हो जाता है। कोई व्यक्ति यदि वास्तुशास्त्रोक्त सिद्धान्तों के अनुसार भूमि का चयन कर उस पर रहने हेतु भवन या अन्य किसी प्रकार का निर्माण करे तो उसे प्रकृति, वास्तुपुरुष तथा शिखी आदि पैंतालीस देवताओं की शक्तियों का आश्रय प्राप्त हो जाता है। इस शास्त्र में वास्तु पुरुष को एक प्राणमय पुरुष मानकर उसके आध्यात्मिक स्वरूप को पूरा-पूरा महत्व दिया गया है। यह सत्य है कि प्रशंसा, संतुष्टि एवं सेवा से किसी भी जीव, मनुष्य अथवा देवता को प्रसन्न कर उसकी कृपा प्राप्त की जा सकती है। तथा यह सब जानते हैं कि प्रकृति के विरुद्ध आचरण करने वाले को जीवन में विविध कष्टों, समस्याओं, रोगों, दारिद्र आदि पीड़ाओं का सामना करना ही पड़ता है। यही इस वास्तुशास्त्र का रहस्य है। जो वास्तुशास्त्र के इस रहस्य को समझ गया वह अपने जीवन में उत्तम लक्ष्यों को प्राप्त कर सकता है।

सरल शब्दों में कहें तो वास्तुशास्त्र आकाशादि पंचतत्त्वों, गुरुत्व-चुम्बक-सौर आदि तीनों शक्तियों, पूर्वादि आठों दिशाओं, सूर्यादि नवग्रहों, अश्विनी आदि सत्ताइस नक्षत्रों की गति-स्थिति तथा प्रभाव पर आधारित एक सुव्यवस्थित पराविज्ञान अथवा आध्यात्म विज्ञान है। वास्तव में प्रकृति के इन उपर्युक्त कारकों के संतुलन के अनुरूप आवासादि का निर्माण करना जिससे इन शक्तियों को भवन में संतुलित व व्यवस्थित रखकर व्यक्ति अपने जीवन को न केवल सुखमय बना सके अपितु सुरक्षित व सुविधायुक्त बनाने के साथ साथ जीवन में शान्ति भी रहे, यही वास्तुशास्त्र का ध्येय अथवा उद्देश्य है। वास्तुशास्त्र के सन्दर्भ में वास्तु पुरुष की उत्पत्ति की कथा भी एक वैज्ञानिक स्वरूप का ही प्रतिपादन करती है जिसमें किसी पदार्थ में स्थित शक्ति की अवस्थाओं को क्रमश समझाने का प्रयास किया गया है, यथा - एक बार भगवान शिव और अंधकासुर नामक राक्षस के मध्य युद्ध हुआ. इसमें भगवान शिव के शरीर से पसीने की एक बूंद भूमि पर गिरी जिससे एक विशाल एवं क्रूर प्राणी का जन्म हुआ जो धुंए के रूप में सर्वत्र व्याप्त होने लगा जिससे समस्त जगत में हलचल हो गई। समस्त देवता घबरा गए तब ब्रह्मा जी की आज्ञा से समस्त देवों ने उसे पकड़ कर पृथ्वी पर औंधे मुंह गिरा दिया, तथा जो - जो देवता उस राक्षस के जिस - जिस अंग पर विराजमान हुए उन उन स्थान अथवा अंग पर तत् सम्बन्धित देवता की शक्ति का प्रभाव उस स्थान पर आ जाता है यह समझना चाहिए। अंधकासुर का गिरते समय इसका सिर ईशान कोण में तथा उत्तर व पूर्व में कंधे, वायव्य व अग्नि कोण में कुहनियां, दोनों पैरों को मोड़े, कुहनियों को छूते हुए, नैऋत्य कोण में जुड़े हुए तलवे अथवा पैर हैं। तब इसके द्वारा ब्रह्मा जी की आराधना की गयी कि महाराज मेरी क्या गलती थी जो मुझे इस प्रकार दण्डित किया जा रहा है इस पर ब्रह्मा जी ने प्रसन्न होकर उसे उस क्षेत्र का वास्तुपुरुष बनाया और आशार्वाद दिया कि तुम्हारी पूजा किए बिना किया गया हर प्रकार का निर्माण वहां रहने वाले व्यक्ति के जीवन में दारिद्र - कष्ट एवं अंधकार लेकर आएगा। इस प्रकार वह धुंध रूपी राक्षस समस्त प्रकार के निर्माणों में वास्तुपुरुष के रूप में

प्रथम पूज्य बन गया । वास्तुपुरुष के नियम विरुद्ध स्थापन पर उस पद के अधिकारी देवता अपनी प्रकृति के विपरीत प्रभाव देते हैं तथा यदि पद के स्वामित्व के अनुकूल स्थापना होती है तो अनुकूल फल प्राप्त होता है. ब्रह्मा के वरदान स्वरूप वास्तु पुरुष को पूजा का अधिकार मिला और यह कहा गया कि पृथ्वी पर निर्माण कार्य तभी सफल होंगे जब वास्तु पुरुष की पूजा होगी और बलि इत्यादि देकर उन्हें प्रसन्न किया जायेगा. यह वास्तु पुरुष ही वास्तु देवता हो गये। अब इस कथा के वैज्ञानिक आयाम पर भी दृष्टिपात करें तो यह पाते हैं कि जो शिव और अंधकासुर है उनमें हमारे लिए जो सकारात्मक अथवा कल्याणकारी शक्ति है वही शिव है तथा इसी प्रकार से जो नकारात्मक अथवा हमें हमेशा अंधकार में रखने वाली शक्ति ही अंधकासुर है। जब इन दोनों में संग्राम होता है तब सकारात्मक शक्ति द्रवीभूत होकर भूमि पर पसीने के रूप में गिरती है । फिर वही द्रवीभूत शक्ति धुंए के रूप में अर्थात् गैस के रूप में सर्वत्र व्याप्त होती है जिसे समस्त प्राकृतिक शक्तियां एकत्रित होकर अपने वस में करती है । तात्पर्य यह है कि तत्त्व पहले ठोस के रूप में विराजमान था फिर उस में क्रिया प्रतिक्रिया के फलस्वरूप उर्जा उत्पन्न होती है फलस्वरूप वह ठोस पदार्थ द्रव के रूप में परिणत होता है फिर वही द्रव तत्त्व गैस के रूप में परिवर्तित हो जाता है, यही ठोस - द्रव - गैस के रूपान्तरण की कथा ही शिव अंधकासुर की कहानी है । वास्तुशास्त्र के सन्दर्भ में उपर्युक्त कथा से तात्पर्य यह है कि जिस स्थान पर हम घर बनाकर रहना चाहते हैं वह स्थान अंधकासुर नामक नकारात्मक प्रवृत्ति से आवृत्त होता है परन्तु उस स्थान पर सकारात्मक शक्ति जो कि कल्याणकारी शिव स्वरूप समस्त देवताओं में विराजमान होकर प्राकृतिक रूप से उस स्थान अथवा भवन पर समस्त प्रकार का नियन्त्रण कर हमें इच्छित सफलताएं प्राप्त करने में मदद मिलती है । इसी प्रकार वास्तुपदमण्डल के पैंतालीस देवताओं की शक्ति के अलावा कुछ अन्य प्राकृतिक शक्तियां भी हैं जो कि वास्तुक्षेत्र को निश्चित रूप से प्रभावित करती हैं ।

वस्तुतः इस प्रकृति में अनन्त शक्तियां समाहित हैं जो कि अक्षुण्ण हैं तथा सदा विद्यमान हैं । वास्तव में इन्हीं शक्तियों के माध्यम से सृष्टि, विकास एवं प्रलय की प्रक्रिया चलती रहती हैं । सामान्यतया इन्हीं अनन्त शक्तियों में से वास्तुशास्त्र गुरुत्व शक्ति, चुम्बकीय शक्ति तथा सौर शक्ति अथवा सौर ऊर्जा आदि तीन प्राकृतिक शक्तियों का प्रमुखतया उपयोग करता है । साथ ही हमें यहां यह भी ध्यान रखना होगा कि वास्तुशास्त्र अन्य प्राकृतिक शक्तियां जो कि इस ब्रह्माण्ड में अनन्त व अक्षुण्ण रूप में विराजमान हैं उन्हें भी नकारता नहीं है तथापि यह शास्त्र भवन निर्माण तथा उसमें रहने वाले प्राणियों को प्रभावित करने वाली प्राकृतिक शक्तियों की चिन्ता करता है इसलिए वास्तुशास्त्र भूमि - भवन एवं उसके आस - पास के वातावरण को प्रभावित करने वाली शक्तियों के बारे में ही विशेषरूप से विचार करता है ।

2.4 वास्तुशास्त्र के अनुसार विविध प्राकृतिक शक्तियाँ

वस्तुतः ब्रह्माण्ड में घटने वाली घटनाएँ अनायास ही घटित नहीं होती है, बल्कि इनके पीछे सृष्टि के नैसर्गिक नियम कार्य करते है । ऐसे कुछ निश्चित नियम और सिद्धांत हैं, जो कि बड़ी प्राकृतिक घटनाओं को तो नियंत्रित करते ही है साथ ही हमारे मानव जीवन के सारे अनुभवों, परिस्थितियों और जीवन में होने वाली घटनाओं को भी नियंत्रित करते है। वास्तु शास्त्र ऐसे ही कुछ महत्वपूर्ण और बेहद प्रभावशाली नियमों पर आधारित विज्ञान है जिसे तार्किक दृष्टिकोण से समझे जाने की आवश्यकता है । वस्तुतः विज्ञान की एक विशेषता होती है कि चाहे आप इसे माने या ना माने लेकिन इसके नियम अपना कार्य करते है । इसी सातत्य में हमें वास्तु

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

शास्त्र को भी एक ऐसा ही विज्ञान मानना चाहिए। वैसे संसार में किसी भी चीज के अस्तित्व के लिए या किसी घटना के घटित होने के लिए यह आवश्यक नहीं है कि उसकी हमें जानकारी हो। ब्रह्माण्ड में इस प्रकार की अनगिनत घटनाएँ निरन्तर घट रही है जिनकी हम जैसे सामान्य मानव को कोई जानकारी नहीं होती है और हमारी (मानवों की) इस अज्ञानता से उन घटनाओं के अस्तित्व पर कोई फर्क नहीं पड़ता है। वास्तु शास्त्र भी भवन निर्माण के सन्दर्भ में एक ऐसा ही विज्ञान है, जो कि किसी भवन अथवा आवास के अन्दर स्थित अदृश्य उर्जाओं और उनके द्वारा भवन में रहने वाले लोगों पर पड़ने वाले प्रभाव के बारे में हमें जानकारी प्रदान करता है। सामान्य रूप से हम यहां यह भी समझ सकते हैं कि हमारे चारों ओर विविध प्रकार की ऊर्जाओं के क्षेत्र (energy fields) विद्यमान हैं जो कि हमें निरंतर प्रभावित कर रहे है, इस सन्दर्भ में चाहे आपको जानकारी हो या नहीं, आप इसे स्वीकार करे या नहीं आपके घर में विद्यमान उर्जायें आपको निरंतर प्रभावित कर रही है। सामान्य रूप से समझें तो यह मानना चाहिए कि मनुष्य की क्षमता होती है तथा उसी क्षमता के अन्दर रहकर ही वह खुद पर पड़ने वाले विभिन्न प्रकार के प्रभावों का पता लगा सकता है इससे इतर नहीं । वस्तुतः इस ब्रह्माण्ड अथवा प्रकृति में अनन्त प्रकार की सूक्ष्म और वृहद् तरह की शक्तियां विराजमान हैं। अगर हम वैज्ञानिकों के अनुसार चिन्तन करें तो हमारे सुनने, देखने, संूघने तथा अनुभव करने की क्षमता आदि का एक निश्चित दायरा है उससे परे हमारा सामर्थ्य नहीं है। उदाहरण के लिए जब अंतरिक्ष में घटी कोई विशाल खगोलीय घटना जिससे देखने - सुनने आदि में हम सर्वथा अक्षम हैं। हम संसार अथवा ब्रह्माण्ड में घटने वाली प्रत्येक घटना को अपनी ज्ञानेन्द्रीयों से समझने का प्रयास करते हैं परन्तु हमारी ज्ञानेन्द्रीयों की भी एक निश्चित सीमा रहती है जिससे परे हम जा नहीं सकते हैं परन्तु फिर भी ब्रह्माण्ड में विद्यमान अनन्त प्रकार की शक्तियां - ध्वनियां - ऊर्जाएं हमें निरन्तर प्रभावित कर ही रही हैं जिन्हें हम महसूस तक नहीं कर पा रहें हैं, परन्तु आज वैज्ञानिकों ने ऐसे बहुत से उपकरण बना लिए हैं जिनके माध्यम से हम विविध प्रकार की ऊर्जाओं - शक्तियों अथवा ध्वनियों को पहचानने में सफल हो सकते हैं। वास्तुशास्त्र द्वारा भी इसी प्रकार की अनन्त अदृश्य प्राकृतिक शक्तियों में समन्वय को साधने का कार्य किया जाता है जिन्हें हम किसी समय विशेष में महसूस भी नहीं कर सकते है। वास्तुशास्त्र के अनुसार इन अदृश्य नैसर्गिक अथवा प्राकृतिक शक्तियों में असंतुलन की स्थिति में ये भवन अथवा वास्तुक्षेत्र में नकारात्मक परिणाम प्रदान करती है और इन प्राकृतिक शक्तियों में उचित तालमेल स्थापित होने पर यह व्यक्ति अथवा भवन में रहने वालों के लिए बेहद लाभदायक भी सिद्ध हो सकती है।

वस्तुतः वास्तुशास्त्र का उपयोग किसी भवन विशेष में स्थित प्राकृतिक ऊर्जाओं मे परस्पर समन्वय स्थापित कर भवन में सकारात्मक उर्जाओं का प्रवाह सुनिश्चित करने से है। अब प्रश्न उठ सकता है कि आखिर अलग-अलग वास्तु से बने भवनों में अलग-अलग प्रकार की विविध ऊर्जायें क्यों प्रवाहित होती हैं ? क्यों सभी में समान प्रकार की ऊर्जा का प्रवाह नहीं होता है? इसको समझने के लिए हम कह सकते हैं कि हमारे चारों ओर सतत सकारात्मक और नकारात्मक ऊर्जाये प्रवाहमान रहती है और ये ऊर्जाये स्थान और वातावरण विशेष की तरफ आकर्षित होती है। अर्थात् नकारात्मक स्थान अशुभ ऊर्जा और सकारात्मक स्थान शुभ ऊर्जा को अपनी तरफ खींचता अथवा आकर्षित करता है। उपरोक्त को हम उदाहरण से समझने के लिए एफ.एम रेडियो अथवा डिस टीवी की विविध फ्रीक्वेंसी से समझ सकते हैं कि रेडियो तथा डिस टीवी की अनन्त फ्रीक्वेंसी हमारे चारों और सतत प्रवाहित रहती हैं जिसकी

आवाज सुनने में हम सर्वथा अक्षम रहते हैं तथापि उपयुक्त यंत्र के माध्यम से हम उसी फ्रीक्वेंसी पर प्रसारित रेडियो कि ध्वनि को सुन सकते हैं अथवा डिस टीवी पर विविध चैनलों पर प्रसारित चलचित्र आदि को देख सुन सकते हैं। कुछ इसी प्रकार से हमारे आसपास के वातावरण में भी विविध प्रकार की प्राकृतिक ऊर्जायें निरन्तर प्रवाहित हो रही हैं जिन्हें आकर्षित करने के लिए हमें अपने घर के वास्तु को भी एक निश्चित फ्रीक्वेंसी पर स्थिर करना होता है। एक भवन का जब निर्माण होता है तो उसका वास्तु, उस घर के भीतर निवास करने वाले लोगों के लिए एक विशेष प्रकार की फ्रीक्वेंसी को तय कर देता है जो कि वहां के वातावरण विशेष के लिए निर्धारित ऊर्जाओं को ही अपनी तरफ आकर्षित करता है। जब कोई भवन वास्तुशास्त्र के सिद्धान्तों के सम्मत होता है तो वह अपने आसपास में स्थित सकारात्मक ऊर्जाओं को अपनी तरफ आकर्षित करता है और गृह-निवासियों को शुभ परिणाम प्रदान करता है तथा जब तक वह फ्रीक्वेंसी बदलेगी नहीं तब तक उस भवन में आकर्षित होने वाली ऊर्जाएं भी सकारात्मक बनी रहेंगी और तदनुरूप ही शुभ और अशुभ परिणाम भी भवन में प्राप्त होंगे।

वस्तुतः विविध प्रकार की ऊर्जा अथवा शक्तियां जैसे सौर ऊर्जा (Solar Energy), चन्द्र ऊर्जा (Lunar Energy), पृथ्वी से निकलने वाली ऊर्जा (Earth Energy), पृथ्वी का घूर्णन (Rotation of Earth), पृथ्वी का परिक्रमण (Revolution of Earth), गुरुत्वाकर्षणीय शक्ति (Gravitational Energy), विद्युतीय ऊर्जा (Electric Energy), चुम्बकीय ऊर्जा (Magnetic Energy),पवन ऊर्जा (Wind Energy), तापीय ऊर्जा (Thermal Energy), ब्रह्माण्डीय ऊर्जा (Cosmic Energy) इत्यादि हमें सतत प्रभावित करती रहती हैं। प्रस्तुत इकाई में हम वास्तुशास्त्र में वर्णित **चुम्बकीय - गुरुत्वीय तथा सौर शक्ति** का विस्तृत रूप से विवेचन करेंगे जो कि निम्न है -

2.4.1 चुम्बकीय शक्ति

वैसे तो ब्रह्माण्ड एक चुम्बकीय क्षेत्र ही है तथा इस (ब्रह्माण्ड) में स्थित समस्त ग्रह - उपग्रह, नक्षत्र तारे आदि का परस्पर सम्बन्ध इस चुम्बकीय शक्ति द्वारा ही है। समस्त ब्रह्माण्डीय चेतना को प्रकृति की यह चुम्बकीय शक्ति तरंगों के माध्यम से संचालित एवं नियन्त्रित करती है। ब्रह्माण्ड में समस्त ग्रहों - उपग्रहों की तरहा हमारी पृथ्वी भी एक बहुत बड़ी चुम्बक ही है जो कि विगत करोड़ो वर्षो से अपनी कक्षा तथा अपनी अक्ष पर निरन्तर घूमते हुई सूर्य की परिक्रमां कर रही है। इस परिभ्रमण से पृथ्वी की चुम्बकीय शक्ति निरन्तर विकसित व उन्नत हो रही है।

वस्तुतःजिस प्रकार से चुम्बक के दो ध्रुव होते है उसी प्रकार हमारी पृथ्वी के भी उत्तरी व दक्षिणी दो ध्रुव स्थान हैं। एक चुम्बक को धागे की सहायता से लटकाने पर उसके छोर अथवा सिर याम्योत्तर अथवा उत्तर एवं दक्षिण में ही रुकते हैं अतः जो सिरा अथवा छोर उत्तर की तरफ रहता है वह चुम्बक का उत्तरी ध्रुव तथा जो सिरा चुम्बक के दक्षिण दिशा की तरफ रहता है वह शिरा चुम्बक का दक्षिणी ध्रुव कहलाता है। यहां यह भी ध्यातव्य है कि किसी भी चुम्बक के एक सिरे के पास यदि अन्य चुम्बक के उसी सिरे को ले जाया जाता है तो दोनों चुम्बकों में परस्पर विकर्षण होता है तथा विपरीत सिरों को पास ले जाने पर दोंनों चुम्बकों में परस्पर आकर्षण होता है अर्थात् उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट हो जाता है कि यदि दो अलग अलग चुम्बकों के उत्तरी ध्रुव अथवा दक्षिणी ध्रुवों को परस्पर पास लाया जाए तो सजातीयता के कारण दोनों सिरे परस्पर दूर भागते हैं तथा दोनों विजातीय सिरों को पास लाया जाये तो

परस्पर आकर्षण होता है अर्थात् दोनों चुम्बक परस्पर चिपक जाती है। अब यह सर्वविदित तथ्य है कि सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड एक चुम्बक का ही तो रूप है तथा इस ब्रह्माण्ड में ग्रह - उपग्रह - तारे आदि विविध चुम्बकीय पिण्ड भी हैं तथा अपनी गति - स्थिति आदि के कारण इनमें परस्पर आकर्षण - विकर्षण होता है। इसी आकर्षण विकर्षण से सम्पूर्ण ब्रह्माण्डीय गतिविधियों से गतिशीलता आ जाती है जिससे की समस्त ब्रह्माण्ड प्रभावित होता है। यहां यह भी स्पष्ट हो जाता है कि जब इस आकर्षण विकर्षण से सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड प्रभावित हो सकता है तो इसी ब्रह्माण्ड में तो हम भी रहते हैं तो हम अर्थात् जीव जगत भी उस चुम्बकीय स्पन्दन से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता है। अर्थात् हम भी ब्रह्माण्डीय स्पन्दन से सतत प्रभावित होते रहते हैं। परन्तु इस प्रभावशीलता का अनुमान सामान्य मानव के सामर्थ्य से बाहर की बात है। यह तो भारतीय सनातन संस्कृति की पुरातन धरोहर हमारे ऋषियों मुनियों के ही सामर्थ्य की बात थी, हमारे ऋषियों ने अपने धैर्य, एकग्रता, विश्वास, साधना, तपस्या, तटस्थता, द्वारा अपनी आन्तरिक चेतना को विकसित किया तथा अपनी **अन्तश्चेतना** के माध्यम से प्रकृति की शक्तियों और सृष्टि अथवा ब्रह्माण्डीय रहस्यों का साक्षात्कार कर जन - जीवन में उनका उपयोग करने के नियमों का भी समाज के कल्याण हेतु प्रतिपादन किया। वास्तव में बुद्धि - मेधा - धैर्य - प्रज्ञा - तटस्थता और विश्वसनीयता की एकरूपता ही अन्तश्चेतना है, यह अन्तश्चेतना या अन्तर्दृष्टि जिनके पास होती है वे देश एवं काल से अतीत होकर तथ्य एवं सत्य दोनों का साक्षात्कार कर लेते हैं, यह अन्तश्चेतना भृगु,अत्रि,वशिष्ठ,नारद,कश्यप,शौनक एवं गर्गादि आचार्यों के ही बस की बात थी, कि उन्होंने प्रकृति की शक्तियों और अनन्त ब्रह्माण्डीय रहस्यों को जानकर जीवन को सुविधाजनक बनाने के विविध उपयोगी नियमों का प्रदिपादन वास्तुशास्त्र के नाम से किया।

हमारे ऋषि तथा आचार्यों ने यह पहले ही जान लिया था कि पृथ्वी की चुम्बकीय शक्ति से हम कैसे प्रभावित होते हैं इसलिए ही तो हमारे पूर्वज पहले से यह बताते आ रहे हैं कि शयन के समय हमारा सिराहना उत्तर की तरफ नहीं होना चाहिए क्योंकि इससे हमारे शरीर का चुम्बकीय बल पृथ्वी का चुम्बकीय बल परस्पर विपरीत दिशा में प्रवाहित होगा जिससे शरीर में विविध प्रकार के विकार आने की संभावना रहती है। क्योंकि पृथ्वी के उत्तरी ध्रुव और शरीर के उत्तरी ध्रुव सिर की एक ही तरफ दिशा होने से परस्पर विकर्षण उत्पन्न होना स्वाभाविक है जिससे शरीर के रक्त संचार में बाधा होने से अनिद्रा, सिर दर्द, तनाव, दुःस्वपन एवं विविध प्रकार के वात से सम्बन्धित रोग उत्पन्न हो सकते हैं। इसलिए उत्तर दिशा की ओर सिर नहीं करके सोने की प्रथा पहले से ही प्रचलित रही है जो कि पूर्णतया वैज्ञानिक भी है।

उपर्युक्त सिद्धान्त को ध्यान में रखकर ही वास्तुशास्त्र में घर के उत्तर दिशा में सबसे अधिक खुला स्थान छोड़ना तथा इसी दिशा अर्थात् भवन की उत्तर दिशा की तरफ ही खिड़की, झरोखे, द्वार आदि का अधिक निर्माण किया जाता है। साथ ही उत्तर दिशा मे भूमि का प्लव होना, इस दिशा में भवन की उचाई का कम होना दक्षिण में भवन की उंचाई का अधिक होना, उत्तर में ऊंचे ऊंचे वृक्षों का अथवा बड़े बड़े ऊंचे भवनों का होना भी निषेध कहा गया है अर्थात् ये सब उपर्युक्त नियम वास्तुशास्त्र के अनुसार आवासीय भवनों में चुम्बकीय शक्ति के उपयोग के लिए ही प्रतिपादित किये गये हैं।

2.4.2 गुरुत्वीय शक्ति

वस्तुतः पंचभूतात्मक इस जगत में शब्द-स्पर्श-रूप-रस-गन्ध आदि पांच प्राकृतिक गुण हमारी

पृथ्वी में पाये जाते हैं ठीक इसी तरह इस पृथ्वी में गुरुत्व शक्ति तथा चुम्बकीय शक्ति भी पायी जाती हैं जिनमें से गुरुत्वशक्ति प्रमुख है जिस हम गुरुत्वाकर्षण बल के नाम से जानते हैं। जिस गुरुत्वाकर्षण शक्ति का तात्पर्य यह है कि पृथ्वी में कोई आकर्षण शक्ति उपस्थित है जो आकाश में स्थित सभी पदार्थों को अपनी तरफ आकर्षित करती है। अर्थात् सरल शब्दों में कहें तो आकाश में स्थित वजनी वस्तुओं पृथ्वी इस गुरुत्वाकर्षण शक्ति के कारण अपनी ओर खींच लेती है यही गुरुत्वाकर्षण है इस सिद्धान्त प्रतिपादन भास्कराचार्य ने अपने ग्रन्थ सिद्धान्तशिरोमणि के गोलाध्याय में भी स्पष्ट किया है।[2] भास्कराचार्य जी के इस सिद्धान्त को यदि अत्यन्त संक्षिप्त रूप में समझें तो यह समझ में आता है कि गुरुत्वाकर्षण में एक शब्द गुरुत्व है, जिसका शाब्दिक अर्थ है वजन से युक्त तथा द्वितीय शब्द है आकर्षण अर्थात् खीचाव, इसका तात्पर्य यह हुआ कि यह पृथ्वी, जो भी वजनी वस्तु अथवा पदार्थ होगा उसे अपनी ओर खीचती हैं यही इस सिद्धान्त का सार है। जैसे कि यदि हम किसी वजनी वस्तु को उचाई से हवा में गिराए तो वह वस्तु पृथ्वी के गुरुत्वाकर्षण के कारण भूमि पर गिर जाती है।

सामान्यतया पृथ्वी की यह गुरुत्व शक्ति न केवल इसके ऊपर निर्माण किये जाने वाले भवनादि को स्थिरता तथा स्थायित्व प्रदान करती है, अपितु यह शक्ति जीव जगत के समस्त क्रिया कलापों को गतिशीलता भी प्रदान करती है। इस सन्दर्भ में हम यह कल्पना कर सकते हैं कि अगर भूमि में यह गुरुत्व शक्ति नहीं हो तो जीवन कैसा होगा ? स्थिति स्पष्ट है तब संसार में अन्तरिक्ष की तरह गतिशून्यता के कारण सब कुछ हवा में ही तैरता रहता रहता जिससे इस भूमि पर भवन - गांव - नगर - राज्य आदि का निर्माण लगभग असम्भव ही रहता।

भारतीय वास्तुशास्त्र में भूमि की इस गुरुत्वशक्ति को ध्यान में रखकर ही मन्दिर,आवास अथवा व्यावसायिक उद्देश्य हेतु बनाये जाने वाले भवनों के स्थायित्व का वर्गीकरण भी किया गया है। इस सन्दर्भ में कुछ आचार्यों ने निर्माण सामग्री के आधार पर झोंपड़ी या पर्णकुटी - मिट्टी से निर्मित कच्चे घर - ईंट अथवा चूने से निर्मित पक्के घर - पत्थर से बने पक्के घर आदि चार प्रकार के भवनों के बारे में बताया है। साथ ही भवन निर्माण को पुण्य फल से जोड़ दिया गया ताकि जन सामान्य भावनात्मक रूप से भी जुड़ सकें इस सन्दर्भ में आचार्य कहते हैं कि अगर आपने अपने घर को घास फूंस अथवा पत्तो से बनाया है तो करोड़ गुना पुण्य फल प्राप्त होता है तथा मिट्टी आदि से कच्चा घर बनाया है तो पूर्व से दशगुणा अर्थात् दश करोड़ गुना पुण्यफल प्राप्त होगा साथ ही अगर आपने अपना घर ईंट या चूने आदि से पक्का घर बनाया है तो पूर्व का दश गुणा अधिक अर्थात् सौ करोड़ गुणा पुण्य फल प्राप्त होगा ठीक इसी तरह यदि घर पत्थर आदि से बनाया गया है तो कहते हैं कि अनन्त गुणा फल प्राप्त होता है।[3] इस प्रकार के निर्माण स्थायित्व, परिणाम एवं रखरखाव की दृष्टि से पर्णकुटि से मिट्टी से बने कच्चे घर फिर ईंट या चूने से बने घर फिर पत्थर से बने घर उत्तरोत्तर अधिक टिकाऊ और सुविधा जनक रहते हैं। कुछ आचार्यों ने निर्माण सामग्री के आधार पर बने घरों के पांच भेद किये हैं जिनमें पूर्वोक्त चार के अलावा पांचवा मिट्टी, छप्पर या खपरेल से बने घर भी कहे हैं। निर्माण सामग्री के आधार पर बनने वाले भवनों में अधिक टिकाऊपन या स्थायित्व के साथ साथ सुविधा भी होती है। कारण स्पष्ट है कि जो चीज जितनी ठोस और वजन से युक्त होगी वह पृथ्वी कि गुरुत्वशक्ति के

---

[2].आकृष्टशक्तिश्च महीतया यत्खस्थं गुरु स्वाभिमुखं स्वशक्त्या। आकृष्यते ……….. सिद्धान्तशिरोमणि,गोलाध्याय

[3] कोटिघ्नं तृणजे पुण्यं मृण्मये दशसंगुणम्। ऐष्टिके शतकोटिघ्नं शैले अनन्तं फलं गृहे॥ बृ.वास्तुमाला श्लोक क्रमांक 05

प्रभाव के कारण उतना ही स्थायित्व प्रदान करेगी।

वास्तुशास्त्र में पृथ्वी की इस (गुरुत्वाकर्षण) शक्ति का उपयोग न केवल भवन निर्माण की सामग्री मात्र में ही नहीं किया गया है अपितु भवन निर्माण में उपयोग लिये जाने वाले भूखण्ड की मिट्टी के घनत्व की जांच में भी किया जाता है। इस सन्दर्भ में समझें तो भूमि पर किसी भी निर्माण से पूर्व उस पर खात किया जाता है। तथा वास्तुशास्त्र के विविध ग्रन्थों में कहा गया है कि भूमि में खात करते समय यदि चींटी, मेंडक, दीमक, सर्प, भूसा, हड्डी,राख,कोयला, कौड़ी, अण्डे, कपास, जली काष्ठ, खप्पर, हथियार, या लोहा आदि मिले तो वहां भवन नहीं बनाना चाहिए।[4] उपर्युक्त का तात्पर्य यह है कि अगर भवन निर्माण करते समय भूखण्ड में जब खात करते हैं तो इन चीजों के मिलने से यह स्पष्ट हो जाता है कि उस भूखण्ड की मिट्टी ठोस नहीं है जिससे उसमें स्थायित्व नहीं है। अगर वहां घर बनाया तो मिट्टी पोली होने के कारण घर बन नहीं पायेगा और बन भी गया तो बालु या रेत के ढेर पर बने हुए घर की तरह यहां भी वह घर क्षण भंगुर अर्थात् टिक नहीं पायेगा। शायद इसीलिए वास्तुशास्त्र के आचार्य, खात की विधि के माध्यम से धरातल व भवन निर्माण की सामग्री के आधार पर भवन के स्थायित्व का विचार करते हुए पृथ्वी की गुरुत्वाकर्षण शक्ति का समुचित उपयोग करने का शास्त्रीय प्रयास करते हैं, क्योंकि विद्वता इसी में है कि प्राकृतिक शक्ति के हिसाब से सन्तुलन बनाकर अगर हम रहेंगे तो जीवन में स्थायित्व रहेगा अन्यथा सब क्षणभंगुर ही हैं।

2.4.3 सौर शक्ति

जगत को प्रकाशित करने वाले भुवन भास्कर भगवान सूर्य पृथ्वी को प्राप्त होने वाली ऊर्जा का सर्व प्रमुख स्रोत है। सूर्य न केवल भूमि का अपितु इस नभोमण्डल में स्थित सौर परिवार में ऊर्जा का प्रमुख केन्द्र भी है। सूर्य अपनी किरणों के माध्यम से भूमि पर ऊर्जा, ताप (ऊष्मां) तथा प्रकाश देकर जीव जगत को गतिशीलता प्रदान करता है। सूर्य से निरन्तर निकलने वाली विकिरणों को वैज्ञानिक प्रमुखतया निम्नांकित तीन वर्गों में विभाजित करते हैं -

01. सूर्य से निकलने वाली पराबैंगनी किरणें।
02. वर्णक्रम प्रकाश
03. रक्त आभा युक्त किरणें।

इनमें से पराबैंगनी किरणें शीतल रहती हैं तथा इन किरणों में वातावरण में मौजूद विषाणुओं को नष्ट करने की एक विशेष प्रकार की रासायनिक क्षमता होती है। द्वितीय प्रकार के वर्णक्रम प्रकाश में इन्द्रधनुष के सात रंगों की रश्मियां होती हैं जिनका वर्ण क्रम क्रमशः बैंगनी-नीला-आसमानी-हरा-पीला-नारंगी और लाल होता है। इन सात रंग की रश्मियों का प्रभाव भी पृथक पृथक रूप से प्राप्त होता है। इनमें मुख्य्य रूप से बैंगनी - नीले व आसमानी रंग की रश्मियों में अन्य वर्ण की रश्मियों की तुलना में मृदुता या शीतलता होती है तथा ज्यों ज्यों बैंगनी से लाल रंग की किरणों या रश्मियों की तरफ बढ़ते हैं त्यों त्यों शीतलता का ह्रास होता जाता है तथा

---

[4] पिपीलिका षोडषपक्षनिद्रा भवन्ति चेत्तत्र वसेन्न कर्ता। तुषास्थिचीराणि तथैव भस्माण्डानि सर्वा मरणप्रदा स्युः ॥
वराटिका दुःखकलिप्रदात्री कार्णस एवाति ददाति दुःखम्। काष्ठं प्रदग्धं त्वतिरोग भीतिर्भवेत्कलिः खर्परदर्शनेन ॥
लौहेन कर्तुर्मरणं निगघ्र विचार्य वास्तु प्रदिशन्ति धीराः ॥ बृ. वास्तुमाला श्लोक क्रमांक 114-115

ऊष्णता की वृद्धि होती है। इनमें भी नारंगी व लाल रंग की किरणों में ऊष्णता अधिक होती है। इसी प्रकार सूर्य की तृतीय प्रकार की किरण रक्त आभा युक्त किरणें अर्थात् रक्ताभ किरणें अपने आप में सर्वाधिक ऊष्णता समेटे रहती हैं।

वस्तुतः प्रातः कालीन सूर्य की किरणों सूर्य की प्रथम प्रकार की पराबैंगनी किरणों की अधिकता रहती हैं तथा रक्ताभ किरणें अत्यन्त कम मात्रा में रहती हैं इसलिये ही प्रातः कालीन किरणें ऊष्णता से युक्त न होकर शीतल रहती हैं। प्रातः कालीन सूर्य की किरणों में हमारे शरीर को पोषक विटामिन जैसे तत्त्व रहते हैं जो हमारे स्वास्थ्य के लिए हितकर रहती तथा पराबैंगनी किरणों के माध्यम से हमारे आसपास का वातावरण भी शुद्ध हो जाता है। सरल शब्दों में कहें तो जिस प्रकार से मानव प्रातः काल शयन के उपरान्त अपने घर की झाड़ पौछ कर साफ सफाई करते हैं ठीक इसी तरह ये पराबैंगनी किरणें भी समस्त भू मण्डल में व्याप्त विषाणुओं का प्रातःकालीन बैला में ही एक प्रकार से झाड़ पौछ कर सफाया कर देती है जिससे भूमि का वातावरण साफ व शुद्ध बन जाता है। इसके बाद धीरे धीरे दिन चढ़ना शुरु करता है तथा सूर्य की किरणों में रक्ताभ (इन्फ्रारेड) किरणों की मात्रा बढ़ने लग जाती है जिससे धूप में गर्मी व तेजी बढ़ती है। इसी प्रकार धीरे धीरे दिन के तृतीय प्रहर में सूर्य की धूप में स्थित रक्ताभ किरणें बहुत तेज व ऊष्ण हो जाती है जो कि असहनीय हो जाती है। इसलिए ऐसी किरणों से बचाव आवश्क है नहीं तो नुकशान हो सकता है।

वास्तव में इस धरा धाम पर जीव जगत में जीवन अथवा प्राण का मुख्य आधार सूर्य ही है। जहां पर सूर्य की किरणे नहीं पहूंचती वहां एक तृण तक नहीं उगता है। सूर्य न केवल पृथ्वी आदि ग्रहों को अपने चारों ओर घुमाता है अपितु भूमि पर हमारी समस्त गतिविधियों का सूत्रधार भी है। प्राणीमात्र की दिनचर्या का प्रारम्भ सूर्योदय से और उपसंहार सूर्यास्त के साथ होता है। यदि इस ब्रह्माण्ड में सूर्य नहीं होता तो पृथ्वी भी नहीं होती तथा पृथ्वी नहीं होती तो हमारे जैसे प्राणीयों का भी जीवन असम्भव ही था। इसलिए भगवान वेद सूर्य को जगत की आत्मां के रूप में उद्घोषित करते हैं।[5]

वस्तुतः सूर्य का व्यास 8,65,680 मील है। इसकी पृष्ठीय परिधि से से इसकी ज्वाला है 200 से 300 मील प्रति सेकंड की गति से लगातार ऊपर की ओर लपकती रहती है इसका बिंब प्रति सेकेंड 3.6×10^{26} वाट शक्ति जगत को देता है जिसका दो सौ करोड़वां भाग पृथ्वी ग्रहण करती है। इससे आप सौर ऊर्जा की शक्ति का अनुमान कर सकते हैं।[6]

सामान्यतया हम जानते हैं कि सूर्य की ऊर्जा में उसकी ऊष्मां व प्रकाश दोनों ही अन्तर्निहित है। जिससे हमारे तन,मन एवं जीवन को सतत शक्ति और स्फूर्ति तो मिलती ही है साथ में इससे हमारी दिनचर्या व्यवस्थित और संचालित होती है साथ में सूर्य की ऊर्जा हमें नियन्त्रित भी करती है। इसलिए हमारे वास्तुशास्त्र के सभी आचार्यो ने इस सन्दर्भ में विभिन्न नियमों का प्रतिपादन किया है जिससे हमारे जीवन में आरोग्यता आ सके तथा साथ में ही सुख सम्पन्नता को प्राप्त कर सकें ।

सूर्य की ऊर्जा के समुचित उपयोग हेतु हमारे आचार्यों ने विविध नियम भी बताये हैं, जैसे प्रातःकाल के समय सूर्य का प्रकाश भवन और आंगन में प्रसारित हो तो सूर्य की तरफ से आने

[5] सूर्यो आत्मां जगतस्तस्थुषश्च, उद्धृत भारतीय वास्तुशास्त्र, शुकदेव चतुर्वेदी पृष्ठ 26

[6] उद्धृत, भारतीय वास्तुशास्त्र, पृष्ट संख्या 27, शुकदेव चतुर्वेदी।

वाली महत्वपूर्ण पराबैंगनीं किरणों के प्रभाव आये लोगों को लाभ प्राप्त होगा। इसके लिए हमें घर की पूर्व दिशा को खाली छोड़ना होगा तथा इस तरफ अगर दीवार आदि है तो खिड़की झरोखे आदि बनाने चाहिए तथा पूर्व दिशा में बड़े बड़े वृक्ष भी नहीं लगाने चाहिए। अगर इन नियमों का लोग पालन करेंगे तो उन्हें सूर्य की ओर से आने वाली उष्म या प्रकाश अथवा पराबैगनीं किरणों से वहां रहने वाले लोगों को इसका अद्भुत लाभ होगा ही।

2.5 सारांश

हमारी सनातन संस्कृति के महान आचार्यो ने प्रकृति एवं सृष्टि के रहस्यों का साक्षात्कार कर हमारे हमारे जीवन में प्रकृति की शक्तियों का उपयोग करने के लिए वास्तुशास्त्र के विविध नियमों व सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया। वास्तव में विज्ञान अपनी प्रारम्भिक दशा में होने के कारण इन नियमों एवं सिद्धान्तों का सम्पूर्ण विवेचन नहीं कर पाता। धीरे - धीरे वैज्ञानिक अनुसंधानों में जैसे - जैसे परिपक्वता आयेगी, हमें वास्तुशास्त्रीय नियमों की अच्छी और तर्कसंगत वैज्ञानिक व्याख्या मिल जायेगी।[7]

वस्तुतः प्रकृति अथवा ब्रह्माण्ड में अनन्त प्रकार की शक्तियों का अक्षुण्ण भण्डार हैं। जिनमें से विविध प्रकार की शक्तियों का हमारे शरीर व मन के उपर सीधा प्रभाव पड़ता रहता है। साथ ही इस सृष्टि में मुख्य शक्ति अथवा ऊर्जा जैसे चुम्बकीय - गुरुत्वीय - सौर शक्ति आदि का प्रभाव हमारे ऊपर अथवा हमारे भवन के ऊपर सतत प्रभाव पड़ता है। इनमें से चुम्बकीय शक्ति का सम्बन्ध ध्रुवीय शक्ति से होता है जो कि ग्रहमण्डल को अपने नियन्त्रण मे रखता है अर्थात् चुम्बकीय शक्ति ही वह शक्ति है जिसके कारण सभी ग्रह अपनी अपनी कक्षा व अक्ष पर निरन्तर घूमते रहते हैं। साथ ही गुरुत्वीय शक्ति हर पिण्ड की अपनी शक्ति होती है। गुरुत्वीय शक्ति के कारण हम तथा हमारे भवन, वृक्षादि सभी वस्तुएं पृथ्वी से निरन्तर जुड़े हुए रहते हैं। अगर गुरुत्वीय शक्ति नहीं होती तो भूमि पर हमारा अस्तित्व ही नहीं होता। इसी प्रकार सौर शक्ति का महत्व भी हमारे जीवन में अत्यधिक है, सौर शक्ति हमारी जीवनी शक्ति का प्रतीक है। सौर शक्ति है इसलिए हम सभी जीवित हैं। सौर शक्ति अथवा सौर ऊर्जा की उपलब्धता से ही पृथ्वी पर समस्त प्रकार की गतिविधियां चलती हैं।

2.6 शब्दावली

अक्षुण्ण - जिसका कभी क्षय नहीं हो, **अनन्त** - जिसका अन्त नहीं हो, **अदृश्य** - जो दिखाई नहीं दे, **याम्योत्तर** - दक्षिण व उत्तर, **आकर्षण** - परस्पर खिचाव, **विकर्षण** - परस्पर दूर भागना, **सजातीयता** - एक प्रकार की गुणधर्मिता, **विजातीयता** - भिन्न प्रकार की गुणधर्मिता, **सर्वविदित** - जिसे सभी जानते हैं, **अन्तश्चेतना** - हृदय में स्थित भाव, **अनिद्रा** - नींद का नहीं आना, **क्षणभंगुर** - कुछ क्षणों के लिए, **नभोमण्डल** - आकाश, **वर्णक्रम** - रंगो का क्रम, **ऊष्णता** - गर्मी, **रक्ताभ** - लाल रंग की आभा, **पृष्ठीय परिधि** - ऊपरी सतह।

2.7 उपयोगी पुस्तकें

1. **भारतीय वास्तुशास्त्र -** लेखक प्रो. शुकदेव चतुर्वेदी, श्री ला. ब. शा.रा. स. वि. नई

[7] उद्धृत भा.वास्तुशास्त्र, शुकदेव चतुर्वेदी पृ.27

दिल्ली।

2. **बृहद्वास्तुमाला-** व्याख्याकार- श्रीरामनिहोर द्विवेदी, प्रकाशक - चौ. सु. प्र. -वाराणसी।
3. **वास्तुरत्नावली-** व्याखाकार- डॉ. श्रीकृष्ण 'जुगनू', प्रकाशक - चौखम्बा ओरि. दिल्ली
4. **वास्तुसार -** व्याख्याता- प्रो. देवी प्रसाद त्रिपाठी जी, प्रकाशक -ईस्टर्न बुक लिंकर्स- दिल्ली
5. **बृहद् भारतीय कुण्डली विज्ञान -** सत्यदेव शर्मा, प्रकाशक - जगदीश सं. पुस्त.- जयपुर
6. **सूर्यसिद्धान्त-** श्री कपिलेश्वर द्विवेदी, प्रकाशक - चौखम्भा संस्कृत संस्थान, वाराणसी
7. **भारतीय ज्योतिष -** नैमिचन्द शास्त्री, प्रकाशक - भारतीय ज्ञानपीठ- दिल्ली
8. **विश्वकर्माप्रकाश-** चौखम्भा सुरभारती प्रकाशन- वाराणासी।
9. **सिद्धान्तशिरोमणि-** आचार्य भास्कर- सं. बापूदेव शास्त्री- चौ. सं. सी. ऑफिस वाराणसी

2.8 बोध प्रश्न

1. वास्तुशास्त्र की सामान्य अवधारणा को समझाएं।
2. वास्तुशास्त्र के सन्दर्भ में प्राकृतिक शक्तियों की अवधारणा को स्पष्ट करें।
3. सौर शक्ति को विस्तृत रूप से समझाएं।
4. चुम्बकीय शक्तियों पर सविस्तार टिप्पणीं लिखें।
5. वास्तुशास्त्र के परिप्रेक्ष में गुरुत्वीय शक्ति पर विस्तृत रूप से प्रकाश डालें।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY